आस्था ही नहीं इतिहास के स्रोत भी हैं मन्दिर

– मनीष कुमार सिंह

प्रायः मंदिरों की दीवारों पर अनेक कलाकृतियां बना दी जाती हैं। इन कलाकृतियों से तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक सूचनाएं प्राप्त होती हैं जिनसे तत्कालीन इतिहास को समझने में सहायता मिलती है।

कोई भी देश या काल अपने भीतर एक समृद्ध इतिहास सहेज कर रखता है। इस समृद्ध इतिहास को सबके सामने प्रकट करने का कार्य इतिहासकार करता है। किसी इतिहासकार को किसी क्षेत्र या काल या व्यक्ति का इतिहास सामने लाने के लिए विभिन्न स्रोतों की आवश्यकता होती है। अगर हम भारतीय इतिहास के बारे में बात करें तो इसे जानने के स्रोतों को तीन मुख्य वर्गों में बांटा जाता है–

1. पुरातात्विक स्रोत
2. साहित्यिक स्रोत
3. विदेशियों के विवरण

इतिहास को जानने के स्रोतों में पुरातात्विक स्रोत अत्यंत महत्वपूर्ण माने जाते हैं क्योंकि इनकी प्रामाणिकता काफी हद तक असंदिग्ध होती है। वस्तुतः पुरातात्विक स्रोतों में निम्नलिखित सामग्रियों को गिना जाता है–

- स्मारक या भवन जैसे महल, मंदिर, साधारण आवास अन्य निर्माण आदि
- अभिलेख
- सिक्के
- मूर्तियां
- चित्रकला आदि

भारत में पुरातात्विक स्रोतों के अंतर्गत मंदिरों का महत्वपूर्ण स्थान है। अतः इतिहास के अध्ययन में इसकी उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए शिक्षक साथियों के साथ संवाद हेतु उद्देश्य से हमने दिनांक 8 अक्टूबर, 2017 को पिथौरागढ़ टीचर लर्निंग सेंटर (टीएलसी) में बातचीत की। इसमें जब मंदिर पर चर्चा प्रारंभ की गई तो सबसे पहले यह महत्वपूर्ण प्रश्न उठा कि आखिर किसी मंदिर को इतिहास का स्रोत क्यों माना जाय? मंदिर किसी काल या क्षेत्र के इतिहास को लिखने में किस प्रकार सहायता करते हैं? इस प्रश्न पर पर्याप्त चर्चा के पश्चात् निम्नलिखित बिन्दु निकल कर आये–

- चूंकि मंदिर किसी काल विशेष का निर्माण हैं इसलिए वह उस समय की अनेक जानकारियों को उपलब्ध कराता है। अतः इसे इतिहास का स्रोत माना जाना चाहिये।
- प्रायः मंदिरों की दीवारों पर अनेक कलाकृतियां बनाई जाती हैं। इन कलाकृतियों से तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक सूचनाएं प्राप्त होती हैं। जिनसे तत्कालीन इतिहास को समझने में सहायता मिलती है।

समूह में इस बात पर भी चर्चा हुई कि क्या अपने प्रारंभ से ही मंदिर इसी रूप में बनाए गए और क्या सम्पूर्ण भारत में मंदिरों का निर्माण एक ही प्रकार से किया जाता था ? या अलग–अलग क्षेत्रों में मंदिर निर्माण की अलग–अलग विधियां थीं। इसके लिए समूह के सदस्यों को विभिन्न क्षेत्रों में निर्मित मंदिरों के चित्र उपलब्ध कराये गए। इन चित्रों का अध्ययन करने के पश्चात सबने यह निष्कर्ष निकाला कि अलग–अलग क्षेत्रों के मंदिरों की संरचना में अंतर है। शिक्षक साथियों की उत्सुकता को देखते हुए मंदिर निर्माण के विकास तथा विभिन्न क्षेत्रों में प्रचलित मंदिर निर्माण की विभिन्न शैलियों पर विस्तार से प्रकाश डाला गया।

भारत में मंदिर निर्माण की एक समृद्ध परम्परा मिलती है किन्तु इस परम्परा का प्रारम्भ गुप्त काल से ही दिखाई देता है। गुप्त काल के पहले भारत में मंदिरों के निर्माण के

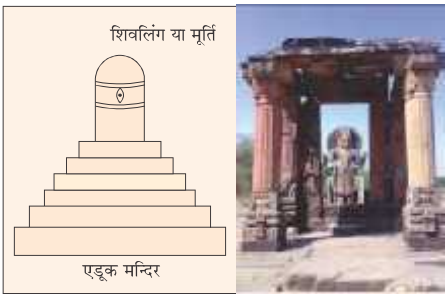

साक्ष्य नहीं मिलते। गुप्त काल के पूर्व के धार्मिक स्मारकों में स्तूपों का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान है। संभवतः भारतीयों को मंदिर निर्माण की प्रेरणा स्तूपों से ही प्राप्त हुई है।

हमें आज मंदिर जिस रूप में दिखते हैं वो अपने प्रारम्भ से ही इस रूप में नहीं बनाये गये वरन इनके विकास की एक लम्बी परम्परा दिखाई देती है। इस क्रम में सर्वप्रथम स्तूपों की प्रेरणा से स्तूपों की ही भांति खुले गर्भगृह वाले मंदिरों की स्थापना की गई। इस प्रकार के मंदिरों को "एडूक मंदिर" कहा गया। इसकी संरचना सीढ़ीनुमा होती थी जिसके शीर्ष पर मूर्ति की स्थापना की जाती थी। (चित्र–एडूक मंदिर)

मंदिर निर्माण के अगले क्रम में भवन का निर्माण प्रारम्भ हुआ। इसके अंतर्गत एक वर्गाकार गर्भगृह का निर्माण किया गया जिसके अन्दर मूर्ति की स्थापना की गई। किन्तु इस चरण में भी मंदिरों की प्रमुख पहचान उसके शिखरों का निर्माण प्रारम्भ नहीं हुआ था। इस चरण के मंदिरों की छत सपाट बनाई गई। इस प्रकार के मंदिर का सर्वप्रथम उदाहरण तिगवा का विष्णु मंदिर तथा एरण का विष्णु मंदिर था जो सम्प्रति नष्ट हो चुका है। (चित्र–एरण का विष्णु मंदिर) ये दोनों मंदिर गुप्त काल में निर्मित किये गए थे।

भारत में शिखरयुक्त मंदिर का पहला उदाहरण गुप्तकाल में ही बनाया गया "देवगढ़ का दशावतार मंदिर" है। इसी मंदिर के प्रभाव से कालान्तर में पूरे भारत में शिखरयुक्त मंदिरों का निर्माण प्रारम्भ हुआ। (चित्र–3 देवगढ़ का दशावतार मंदिर)

कालान्तर में भारत के विभिन्न भागों में अत्यधिक संख्या में मंदिरों का निर्माण प्रारम्भ हुआ। इन मंदिरों के निर्माण में क्षेत्र के अनुसार अन्तर भी दिखाई देता है। विद्वानों ने इन क्षेत्रीय विषमताओं के आधार पर मंदिर निर्माण की शैलियों को तीन भागों में बांटा है। ये शैलियां हैं –

1. नागर शैली
2. द्रविड़ शैली
3. वेसर शैली

नागर शैली उत्तर भारत में कश्मीर से लेकर नर्मदा नदी तक प्रचलित थी। वास्तुशास्त्र के अनुसार नागर शैली के मंदिरों की सर्वप्रमुख विशेषता इनका आधार से लेकर शीर्ष तक चतुष्कोणीय होना है। नागर शैली के मंदिरों के निर्माण में क्षेत्रीय विभिन्नता के कारण कुछ अन्तर भी मिलता है जैसे उड़ीसा तथा राजस्थान के मंदिरों में किन्तु सम्पूर्ण नागर क्षेत्र के मंदिरों की मूल भावना और उसकी आत्मा समान मिलती है।

नागर शैली के मंदिरों के तल–विन्यास की बात करें तो इसमें निम्नलिखित अंग मिलते हैं–

1. प्रवेश द्वार 2. अर्ध–मण्डप 3. मण्डप 4. महामण्डप 5. अंतराल और 6. वर्गाकार गर्भगृह (चित्र–4 तल विन्यास)

तल–विन्यास के आधार पर नागर शैली के मंदिरों के दो प्रकार मिलते हैं–

1. सान्धार मंदिर – जिन मंदिरों में उनके गर्भगृह के चारों ओर प्रदक्षिणापथ मिलता है।
2. निरन्धार मंदिर – जिन मंदिरों में उनके गर्भगृह के चारों ओर प्रदक्षिणापथ नहीं मिलता है।

नागर शैली के मंदिरों को अगर अन्दर से देखें तो सभी अंग स्थापत्य की एक ही इकाई के समान दिखते हैं क्योंकि इसके विभिन्न अंगों के बीच में विभाजक दीवार नहीं बनाई जाती।

इस शैली के मंदिरों के उर्ध्व–विन्यास की बात करें तो इसमें निम्नलिखित अंग मिलते हैं–

1. जगती 2. अधिष्ठान 3. बेदिबन्ध 4. जंघा 5. वरंडी 6. वक्ररेखीय शिखर 7. ग्रीवा 8. आमलक 9. कलश और 10. आयुध (चित्र–उर्ध्व विन्यास)

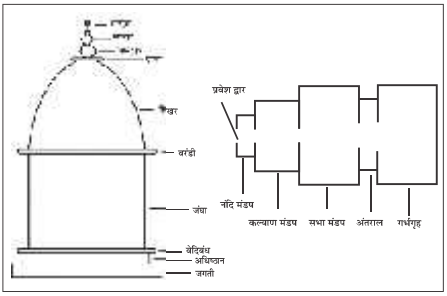

नागर शैली के मंदिरों की सर्वप्रमुख विशेषता उनका वक्ररेखीय शिखर है। उर्ध्व–विन्यास के आधार पर भी नागर शैली के मंदिरों के दो प्रकार थे–

1. एकाण्डक मंदिर – जिन मंदिरों के ऊपर एक ही शिखर होता है।
2. अनेकाण्डक मंदिर– जिन मंदिरों के ऊपर एक से अधिक शिखर होते हैं।

इस प्रकार यदि तल–विन्यास और उर्ध्व–विन्यास को मिलाकर देखें तो नागर शैली के अंतर्गत कुल चार प्रकार के मंदिर मिलते हैं। खजुराहो का कंदरिया महादेव मंदिर, भुवनेश्वर का लिंगराज मंदिर, कोणार्क का सूर्य मंदिर, आबू का दिलवाड़ा मंदिर नागर शैली के मंदिरों के प्रमुख उदाहरण हैं।

मंदिर निर्माण की दूसरी शैली द्रविड़ शैली है जिसका विस्तार दक्षिण भारत में कृष्णा नदी से लेकर कन्याकुमारी तक है। इस शैली के मंदिरों के तल–विन्यास में निम्नलिखित अंग मिलते हैं–

1. प्रवेश द्वार 2. नन्दी मण्डप 3. कल्याण मण्डप 4. सभा मण्डप 5. अंतराल और 6. आयताकार गर्भगृह (चित्र तल विन्यास)

द्रविड़ शैली के मंदिरों को अन्दर से देखें तो इसके सभी अंग एक दूसरे से अलग दिखाई देते हैं। इस शैली के मंदिरों के उर्ध्व–विन्यास में निम्नलिखित अंग मिलते हैं–

1. अधिष्ठान 2. पद या भित्ति 3. प्रस्तर 4. विमान तल 5. ग्रीवा 6. शिखर और 7. स्तूपी या स्तूपिका (चित्र उर्ध्व विन्यास)

द्रविड़ शैली के मंदिरों की एक प्रमुख विशेषता यह है कि ये मंदिर चहारदीवारी से घिरे विशाल प्रांगण के मध्य स्थित हैं। इस प्रांगण में प्रवेश करने के लिए एक भव्य प्रवेश–द्वार होता है जिसे "गोपुरम" कहा जाता है। इस गोपुरम के ऊपर गर्भगृह के समान ही तलबद्ध पिरामिड के आकार के शिखर बनाए जाते हैं। कहीं–कहीं गोपुरम के ऊपर बनाये गये शिखर गर्भगृह के शिखर से भी ऊंचे हैं। ये गोपुरम सम्पूर्ण द्रविड़ मंदिर स्थापत्य को अत्यंत भव्यता प्रदान करते हैं। (चित्र गोपुरम) अधिकांश मंदिरों की चहारदीवारी में अन्दर की ओर अनेक छोटे–छोटे मंदिरों का निर्माण किया गया है जिनमें सहायक देवी–देवताओं की मूर्तियां स्थापित की गई हैं। अधिकांश मंदिरों के प्रांगण में एक तालाब भी मिलता है।

द्रविड़ मंदिरों की सर्वप्रमुख विशेषता उनका तलबद्ध पिरामिड के आकार का शिखर है जो क्रमशः छोटे होते गए तलों द्वारा बनाया गया है। तंजौर का वृहदीश्वर मंदिर, कांची का कैलाश मंदिर, महाबलीपुरम के मंदिर द्रविड़ शैली के प्रमुख उदाहरण हैं। उत्तर भारत में भी द्रविड़ शैली का एक प्राचीन मंदिर स्थित है। यह ग्वालियर में स्थित तेली का मंदिर है।

वेसर शैली मुख्य रूप से नागर शैली और द्रविड़ शैली के मिश्रण से उत्पन्न हुई। इस शैली का विस्तार नर्मदा नदी से लेकर कृष्णा नदी तक था। वेसर शैली में मूल नियोजन और प्रारूप द्रविड़ शैली से ग्रहण किया गया है जबकि अलंकरण और निरूपण नागर शैली से लिया गया है। इस शैली के मंदिरों का ग्रीवा तक का निचला भाग वर्गाकार तथा शीर्ष भाग वृत्ताकार होता है। इसका शिखर भी वृत्ताकार होता है। हालेविड का होयसलेश्वर मंदिर, बेल्लूर का चेन्नाकेशव मंदिर, बुरहानपुर का खानदेश मंदिर, नासिक का त्रयम्बकेश्वर मंदिर वेसर शैली के प्रमुख उदाहरण हैं।

समूह में मंदिरों के विकास तथा उनके निर्माण की शैलियों पर विस्तृत चर्चा के पश्चात् इस मुद्दे पर भी गम्भीर बातचीत हुई कि आखिर इन मंदिरों के निर्माण का उद्देश्य क्या था? इस चर्चा के उत्तर में प्रतिभागियों ने कुछ प्रमुख बिन्दु सामने रखे जैसे–

- चूंकि शासक को जनता पर शासन करना होता था

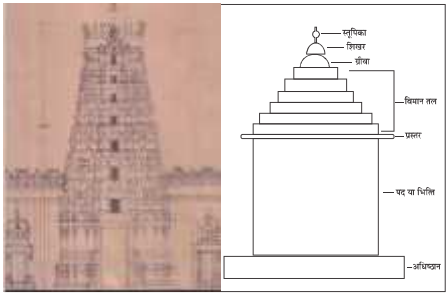

इसलिए वह आम जनता की धार्मिक भावनाओं को संतुष्ट करने के लिए इन मंदिरों का निर्माण कराता था जिससे जनता उसके प्रति सहानुभूति रखे।

- शासक अपनी धार्मिक मान्यता के अनुसार अपने आराध्य के प्रति अपनी प्रगाढ़ आस्था के प्रदर्शन के लिए भी मंदिरों का निर्माण कराता था।
- शासक अपनी सम्पन्नता तथा वैभव के प्रदर्शन के लिए भी भव्य मंदिरों का निर्माण कराता था।
- किसी क्षेत्र विशेष पर अपने शासन के प्रदर्शन के लिए भी मंदिरों का निर्माण शासकों द्वारा कराया जाता था।
- कभी–कभी विजय के उपलक्ष्य में विजय के प्रतीक के रूप में भी मंदिरों का निर्माण कराया जाता था।
- शासकों के अतिरिक्त महाजन तथा आम जनता भी अपनी धार्मिक मान्यता के अनुसार मंदिरों का निर्माण कराती थी जैसा कि आजकल दिखाई देता है।

इन तथ्यों के आधार पर यह आम धारणा बनी कि मंदिरों के निर्माण का कोई एक सर्वमान्य कारण नहीं था बल्कि इनके निर्माण के पीछे अलग–अलग उद्देश्य दिखाई देते हैं।

इस बैठक के अंत में इस बात पर भी विचार किया गया कि आखिर प्राचीन मंदिरों से सम्बंधित बातों से बच्चों को कैसे जोड़ा जा सकता है? इसके द्वारा उनमें कैसे इतिहास के प्रति रुचि जागृत की जा सकती है? इसके उत्तर में यह तथ्य सामने आये कि प्रायः सभी गांवों में या उसके आस–पास कोई न कोई प्राचीन मंदिर मिल ही जाता है। अतः बच्चों को मंदिर के बारे में सामान्य जानकारी देकर उनसे अपने घर के निकट के किसी पुराने मंदिर के बारे में जानकारी एकत्र करने तथा उस मंदिर में क्या–क्या है इसको देखकर लिखने को कहा जा सकता है। यदि विद्यालय के आसपास कोई पुराना मंदिर हो तो बच्चों को वहां साथ ले जाकर मंदिर के बारे में प्रत्यक्ष जानकारी दी जा सकती है। साथ ही उस मंदिर का इतिहास क्या है? यह उसके आस–पास रहने वाले किसी बुजुर्गों से पता किया जा सकता है जिसमें बच्चों की मदद ली जा सकती है। इस प्रकार के कार्यों से बच्चों में उत्सुकता बढ़ेगी और वह इतिहास के स्रोतों तथा अन्य जानकारियों को जानने का प्रयास करने के लिए प्रेरित होंगे।

(लेखक अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन, पिथौरागढ़ से जुड़े हैं)

क्या सामाजिक है विज्ञान ?

क्या सामाजिक है विज्ञान
आओ इसकी करें पहचान
कौन-कौन से विषय है इसमें
किस किसका मिलता है ज्ञान
कैसे इसको जानें हम?
कैसे करें इसकी पहचान।

अन्तरिक्ष का इतिहास है इसमें
आकाश गंगा का भूगोल
सौरमंडल का ज्ञान है इसमें
नहीं है धरती गेंद सी गोल
अब हमको है इसका भान
क्या सामाजिक है विज्ञान।

धरती के निर्माण से लेकर
जीवों की उत्पत्ति तक
युगों-युगों का इतिहास है इसमें
क्या-क्या पाया हमने अब तक
कर विश्लेषण और परीक्षण
हमको मिला क्रमबद्ध ज्ञान
इसीलिए यह है विज्ञान
हम कर रहे इसकी पहचान।

अवलोकन परीक्षण व निष्कर्ष
इसके हैं ये कुछ सोपान
कई विषयों की श्रृंखला है यह
विषय बना यह बड़ा महान
हमने कर ली इसकी पहचान।

– सतीश सेमवाल
राजकीय जूनियर हाईस्कूल, भटवाड़ी, उत्तरकाशी